प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

Dr. Dinesh Kumar, Assistant Professor, Sant Prannath Parnami PG College, Padampur(Raj.)
Dr. Usha Sharma, Assistant Professor, Shiva College of Education, Lalgarh Jatan, Sri Ganganagar (Raj.)

परिचय

मनुष्य अपने जीविकोपार्जन के लिये प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता है। आदिम–मानव अपने पर्यावरण से प्राप्त वनस्पतियों एवं पशुओं पर निर्भर था। उस समय जनसंख्या का घनत्व कम था, मनुष्य की आवश्यकताएँ सीमित थीं तथा प्रौद्योगिकी का स्तर नीचे था। अतः उस समय संरक्षण की समस्या नहीं थी। कालान्तर में मनुष्य ने संसाधनों के दोहन की प्रौद्योगिकी में विकास किया। वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास द्वारा मनुष्य जीविकोपार्जी संसाधनों के अतिरिक्त, उत्पादन के संसाधनों का भी दोहन करने लगा। आज आधुनिक तकनीकी की सहायता से संसाधनों का दोहन और भी बड़े पैमाने पर होने लगा है। जनसंख्या की निरंतर वृद्धि के कारण संसाधनों की मांग बढ़ रही है साथ ही प्रौद्योगिकी के विकास द्वारा इन्हें उपभोग करने की मनुष्य की क्षमता भी बढ़ी है अतः इस होड़ ने यह आशंका उत्पन्न कर दी है कि कहीं ये संसाधन शीघ्र समाप्त न हो जाएँ और पूरी मानवता के जीवन पर ही प्रश्नचिन्ह न लग जाए।

संरक्षण से तात्पर्य

प्राकृतिक संपदाओं का योजनाबद्ध और विवेकपूर्ण उपयोग किया जाए तो उनसे अधिक दिनों तक लाभ उठाया जा सकता है, वे भविष्य के लिये संरक्षित रह सकती हैं। संपदाओं या संसाधनों का योजनाबद्ध समुचित और विवेकपूर्ण उपयोग ही उनका संरक्षण है। संरक्षण का यह अर्थ कदापि नहीं कि 1. प्राकृतिक साधनों का प्रयोग न कर उनकी रक्षा की जाए या 2. उनके उपयोग में कंजूसी की जाए या 3. उनकी आवश्यकता के बावजूद उन्हें बचाकर भविष्य के लिये रखा जाए। वरन संरक्षण से हमारा तात्पर्य है कि संसाधनों या संपदाओं का अधिकाधिक समय तक अधिकाधिक मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अधिकाधिक उपयोग।

संरक्षण की आवश्यकता

मानव विभिन्न प्राकृतिक साधनों का उपयोग अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिये करता आ रहा है। खाद्यान्नों और अन्य कच्चे पदार्थों की पूर्ति के लिये उसने भूमि को जोता है, सिंचाई और शक्ति के विकास के लिये उसने वन्य पदार्थों एवं खनिजों का शोषण और उपयोग किया है। पिछली दो शताब्दियों में जनसंख्या तथा औद्योगिक उत्पादनों की वृद्धि तीव्र गति से हुई है। विश्व की जनसंख्या आज से दो सौ वर्ष पूर्व जहाँ पौने दो अरब थी वहाँ सवा पाँच अरब पहुँच चुकी है। हमारी भोजन, वस्त्र, आवास, परिवहन, साधन, विभिन्न प्रकार के यंत्र, औद्योगिक कच्चे माल आदि की खपत कई गुनी बढ़ गई है और इस कारण हम प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से गलत व विनाशकारी ढंग से शोषण करते जा रहे हैं। उदाहरणार्थ, पिछली दो शताब्दियों में करोड़ों हेक्टेयर भूमि से प्राकृतिक वनस्पतियों वन आदि को साफ किया गया जिससे मिट्टी का कटाव बढ़ चला। भूमि के गलत उपयोग से उसकी उत्पादन क्षमता घट गयी। विभिन्न खनिज पदार्थों की संचित राशि समाप्तप्राय हो गयी है। हम हवा और पानी को भी प्रकृति के मुफ्त देन समझकर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दूषित करने लगे हैं। अनेक जीव जंतुओं का भी हमने सफाया कर दिया। तात्पर्य यह है कि प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने लगा है। यदि यह संतुलन नष्ट हुआ तो मानव का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा। अतः मानव के अस्तित्व एवं प्रगति के लिये प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण अत्यावश्यक हो चला है।

संसाधनों के संरक्षण के उपाय

प्राकृतिक संपदा हमारी पूँजी है जिसका लाभकारी कार्यों में सुनियोजित ढंग से उपयोग होना चाहिए। इसके लिये पहले हमें किसी देश या प्रदेश के संसाधनों की जानकारी होनी चाहिए। फिर हमें ध्यान रखना चाहिए कि विभिन्न संसाधन परस्परावलम्बी तथा परस्पर प्रभावोत्पादक होते हैं अतः एक का ह्रास हो या नाश हो तो उसका कुप्रभाव पूरे आर्थिक चक्र पर पड़ता है। हमें इनका उपयोग प्राथमिकता के आधार पर करना चाहिए। जो संसाधन या प्राकृतिक संपदा सीमित है उसे अंधाधुंध समाप्त करना अदूरदर्शिता है। सीमित परिभाग वाली संपदा (यथा कोयला, पेट्रोलियम) के विकल्प की खोज करते रहना श्रेयस्कर है। संसाधनों के संरक्षण के लिये सरकारी तथा गैर सरकारी स्तर पर पूर्ण सहयोग मिलना आवश्यक है।

1. मृदा संरक्षण

मृदा वनस्पतियों के उगने का माध्यम है जो विभिन्न प्रकार के प्राणियों का जीवन आधार है। फसलें, घास, फल–फूल, सब्जियाँ, वृक्ष आदि सभी मृदा में उगते हैं। मृदा एक नवीकरण योग्य संसाधन है परन्तु अपरदन एवं निक्षालन आदि कुछ ऐसी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं जिससे मृदा संरक्षण आवश्यक हो जाता है। मृदा को बहुत बड़ी हानि अपरदन से होती है। मृदा अपरदन प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक कारणों से होता है। इसके प्राकृतिक कारक भूमि का ढाल, वर्षा की तीव्रता, वायु वेग, हिमानी प्रवाह आदि हैं। सांस्कृतिक कारकों में वनों का अत्यधिक दोहन, धरातल पर वनस्पतियों का विनाश, अति पशु चारण एवं अवैज्ञानिक कृतिष पद्धति आदि मुख्य हैं। मृदा संरक्षण के उपाय स्थानीय कारकों के आधार पर किये जाते हैं। पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीनुमा खेत बनाकर कृषि करना, वनोरोपण, अवालिकाओं को पत्थरों से बंद करना तथा अवालिकाओं के शीर्ष को और बढ़ने से रोकना आदि मृदा संरक्षण के उपाय के रूप में अपनाए जाते हैं।

शुष्क एवं मरुस्थलीय क्षेत्रों में मृदा अपरदन वायु द्वारा होता है। वृक्षों तथा वनस्पतियों के विनाश से वायु वेग की तीव्रता में अवरोध नहीं होता अतः अपरदन को रोकने के लिये वृक्षों का लगाना एक प्रभावशाली उपाय है। थोड़ी–थोड़ी दूर पर वृक्षों की कतारें लगाकर शैल्टरबेल्ट बनाई जा सकती है। फसल कटने के बाद खेत खाली हो जाते हैं, उन पर भी वायु वेग से मृदा अपरदन होता है अतः इससे बचने के लिये फसल का 30–35 से.मी. तक डंठल छोड़कर काटना चाहिए जिससे धरातल पर वायु वेग का प्रभाव न पड़े। मरुस्थलीय क्षेत्रों में अति पशुचारण पर प्रतिबंध लगाकर भी मृदा अपरदन को रोका जा सकता है। इसरायल में पेट्रोलियम जेली का उपयोग भी किया गया है।

मैदानी भागों में मृदा अपरदन की गम्भीर समस्या चिकनी मिट्टी (क्ले) के क्षेत्रों में अवनालिकाओं के कारण होती है। इन क्षेत्रों में खेतों में मेड़ बनाकर, अति पशुचारण पर रोक लगाकर वैज्ञानिक फसल चक्र अपनाकर, तथा हरी एवं गोबर की खाद का प्रयोग कर तथा नालों के पानी के प्रवाह पर नियंत्रण द्वारा मृदा अपरदन को कम किया जा सकता है।

मृदा का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण इसकी उर्वरता है। इसका संरक्षण आवश्यक है। उर्वरता में ह्रास से उत्पादकता कम हो जाती है। हरी तथा गोबर की खाद मिलाकर, रासायनिक उर्वरकों तथा जिप्स के प्रयोग, फसल चक्र अपनाकर तथा परती छोड़कर, मृदा की उर्वरता को बढ़ाया जाता है। इस प्रकार से मृदा का नवीकरण भी होता रहता है।

2. वनस्पति का संरक्षण

वनस्पति का उपयोग दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। औद्योगिक क्रांति के बाद वनों का बड़े पैमाने पर ह्रास हुआ है। भारत के कई भागों में ईंधन और काष्ठ कोयला के लिये अंधाधुंध लकड़ी की कटाई हुई और ऐसे क्षेत्रों में झाड़ियाँ उग आईं। प्राचीन तृण भूमियाँ आज कृषि

क्षेत्र में बदल गयी हैं। भारत के प्राचीन वनों को आग लगाकर नष्ट किया जा चुका है। इसके परिणाम हैं मिट्टी का कटाव, अधिक अपवाह और बाढ़। कहीं–कहीं दावाग्नि, कीडे–दीमक आदि से भी वनों को क्षति पहुँचती है। इन क्षतियों से बचने के लिये वन संरक्षण अनिवार्य है। वनों से प्राप्त होने वाले गौण पदार्थों की मांग भी निरंतर बढ़ती जा रही है अतः वनों के संरक्षण की अत्यंत आवश्यकता है।

वन संरक्षण के लिये इन बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है:

1. जिन क्षेत्रों से निकट अतीत में वृक्ष काट डाले गए हैं, वहाँ वृक्षारोपण किया जाए। वृक्षारोपण से न केवल वन संपदा की वृद्धि होगी बल्कि मिट्टी का कटाव कम होगा, अपवाह घटेगा और भूमि जल की आपूर्ति में वृद्धि होगी।
2. वनों से केवल परिपक्व वृक्ष ही काटे जाएँ। इससे विकासशील वृक्षों को बढ़ने का अवसर मिलेगा।
3. वन प्रदेश में कटाई के लिये फसल चक्र पद्धति अपनायी जाए तो क्रम से वन विकसित होगा और नियमित लाभ होता रहेगा।
4. वन क्षेत्र का विस्तार किया जाए अर्थात नये वन लगाए जाएँ।
5. वनों की देखभाल ठीक से की जाए। आग प्रसार रोकने के समुचित प्रबंध किए जाएँ। उन पर दीमक तथा अन्य कीटाणुओं और बीमारियों से बचाव के लिये वायुयान द्वारा दवा छिड़काव कराया जाए।
6. वन संरक्षण के लिये सरकार द्वारा एक कठोर नियंत्रण नीति लागू की जाए।

3. जीव–जन्तुओं का संरक्षण

जीवन की विविधता बनाए रखने में वन्य प्राणियों का बहुत योगदान है। रंग–बिरंगी चिड़ियाँ, जानवर एवं अन्य जीव जंतु वनों में पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिये आवश्यक हैं। वनों में भोजन शृंखला को बनाए रखने में प्रत्येक का बहुत योगदान है। वन के ह्रास के साथ–साथ वन्य प्राणियों की संख्या में भी कमी आयी है। इनकी जातियाँ समाप्त न हो जाएँ इसलिये इनका संरक्षण आवश्यक है। भविष्य के लिये जीव जंतुओं को सुरक्षित रखने में ये उपाय कारगर सिद्ध हुए हैं।

1. विश्व के विभिन्न भागों में जीवों को शरण देने के लिये स्थान स्थापित करना। हमारे देश में राष्ट्रीय उद्यानों अभ्यारण्यों की स्थापना इसी उद्देश्य से की गयी है। इन उद्यानों और अभ्यारण्यों में वन्य जीव–जंतुओं को प्राकृतिक वातावरण उपलब्ध कराया गया है तथा यहाँ इनके शिकार पर प्रतिबंध है।
2. पालतू पशुओं की उचित देखभाल ताकि उनकी नस्ल न बिगड़े तथा उनसे अधिक मात्रा में उत्पादन मिल सके।
3. चारे की फसलें उगाना, चरागाहों में उर्वरकों का प्रयोग करना, पशुओं का चयन और नस्ल सुधार करना ताकि पशुओं के संरक्षण के साथ–साथ अधिक उत्पादन मिल सके।

4. खनिज संपदा का संरक्षण

खनिजों का निरंतर खनन करते रहने पर कुछ वर्षों बाद उनकी समाप्ति हो जाती है। एक बार शोषण होने पर समाप्त होने खनिजों का संरक्षण अति आवश्यक है। विश्व में खनिजों का असमान वितरण मिलता है और उसकी मात्रा सीमित है। अतः उनके संचित भंडार के संरक्षण की और भी अधिक आवश्यकता है। खनिजों का संरक्षण इन विधियों से किया जा सकता है।

1. धात्विक खनिजों को खोदकर निकालने और माल तैयार करने में होने वाली बर्बादी को रोकना या कम करना।

2. विरल या कम प्राप्य खनिजों के लिये विकल्पों की खोज तथा प्रतिस्थापन, जैसे धातुओं के स्थान पर प्लास्टिक, टीन की जगह अल्यूमिनियम का उपयोग आदि।
3. सभी खनिजों का बार–बार उपयोग संभव नहीं है फिर भी कुछ खनिजों के स्क्रैप–जैसे रद्दी माल को प्रयोग में लाना भी संरक्षण की एक महत्त्वपूर्ण विधि है।
4. नए खनिज क्षेत्रों और नए खनिजों की खोज करते रहना।

5. जल संरक्षण

जल का उपयोग कृषि, उद्योगों, यातायात, ऊर्जा तथा घरेलू उपयोग के संसाधन के रूप में किया जाता है। जल का संरक्षण जीवन का संरक्षण है। जल एक चक्रीय संसाधन है जिसको वैज्ञानिक ढंग से साफ कर पुनः प्रयोग में लाया जा सकता है। पृथ्वी पर जल वर्षा और बर्फ से उपलब्ध होता है। यदि जल का युक्तिसंगत उपयोग किया जाए तो वह हमारे लिये कभी कम नहीं पड़ेगा। परन्तु संसार के कुछ भागों में जल की बहुत कमी है। जल का प्राकृतिक स्रोत वर्षा, बर्फ तथा ओम जल है। वर्षा का जल प्रवाहित होकर नदियों एवं नालों में पहुँचता है। इसके उपयोग के लिये जल को बाँध बनाकर रोका जा सकता है। जल का अधिकतम उपयोग कृषि में सिंचाई के लिये किया जाता है। यदि सिंचाई में प्रयोग होने वाले जल की बचत सम्भव हो सके तो यह बड़ी मात्रा में अन्य कार्यों के लिये भी उपलब्ध हो सकता है। नहरों को पक्का करके अवस्रवण से होने वाली हानियों को रोका जा सकता है। स्प्रिंकलर प्रभावी सिंचाई का माध्यम है इससे पानी की बचत होती है तथा ऊँची नीची भूमि पर भी सिंचाई की जा सकती है। यद्यपि इसमें पूँजी अधिक लगती है परन्तु वाष्पीकरण तथा निस्रवण द्वारा होने वाली पानी की हानियों को रोका जा सकता है। ट्रस्य आ टिंकिल सिंचाई की विधि से जल भूमि के भीतर छेददार नलिकाओं द्वारा पौधों की जड़ों में डाला जाता है इससे वाष्पीकरण से होने वाली हानियों को रोका जा सकता है।
उद्योगों में पानी की भारी मांग होती है। इसे कम करने से दो लाभ होंगे। प्रथम इससे उद्योग के अन्य खण्डों की पानी की मांग को पूरा किया जा सकता है। द्वितीय, इन उद्योगों द्वारा नदियों एवं नालों में छोड़े गए दूषित जल की मात्रा कम हो जाएगी। अधिकांश उद्योगों में जल का उपयोग शीतलन के लिये होता है। इस कार्य के लिये यह आवश्यक नहीं कि स्वच्छ और शुद्ध जल का प्रयोग किया जाए। इस कार्य के लिये पुनर्शोधिक जल का उपयोग किया जा सकता है। इसी पानी को बार–बार प्रयोग करके स्वच्छ जल की मात्रा को संरक्षित किया जा सकता है। जल की घरेलू मांग को भी संरक्षण की विधियों द्वारा कम किया जा सकता है।

6. वायु संरक्षण

वायु प्राण का आधार है अतः वायु की शुद्धता पर हमारा स्वास्थ्य निर्भर होता है। वायु में कुछ तो नैसर्गिक अशुद्धताएँ होती हैं परन्तु अधिकांश मनुष्य द्वारा उत्पन्न की गयी हैं। पवन वेग से उठी हुई आंधियाँ धूलकणों को वायु में मिलाती हैं। इसी प्रकार ज्वालामुखी उद्गारों से निकली राख भी वायु को प्रदूषित करती है। परन्तु मनुष्य द्वारा उत्पन्न किया गया प्रदूषण बड़े पैमाने पर हो रहा है और वह अधिक घातक है। खनिज तेल, मशीनों और मोटरगाड़ियों में जलकर सल्फर तथा नाइट्रोजन आक्साइड उत्पन्न करता है। धात्विक अयस्क के प्रगलन के लिये कोयला जलाया जाता है जिसका धुआँ आकाश पर छाया रहता है फैक्ट्रियों की चिमनियों से निकलने वाला धुआँ, रेडियोधर्मी पदार्थों (परमाणु कचरे) से निकलने वाला विकिरण आदि सभी वायु को प्रदूषित कर रहे हैं अतः वायु का संरक्षण आवश्यक है।
वायु की शुद्धता को दो प्रकार से बनाए रखा जा सकता है। प्रथम तकनीकी निरीक्षण द्वारा तथा द्वितीय भारी कर लगाकर। इसके लिये मोटरगाड़ियों, चिमनियों में ऐसी जाली लगाना

आवश्यक है ताकि वायु में हानिकारक तत्व न पहुँचें। चिमनियों की ऊँचाई अधिक रखी जाए। अधिक वृक्षारोपण तथा मानव अधिवासों के पास हरित क्षेत्र बनाकर वायु के प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मिट्टी और वनों के ह्रास, जीव जंतुओं के संहार, खनिजों के अत्यधिक खनन, धुआँ से और जहरीले औद्योगिक प्रदूषणों से भरे महानगरीय वातावरण तथा जल एवं वायु के प्रदूषण से मानव वंश की नौका डगमगा रही है, उसकी शांति और समृद्धि खतरे में है। यदि विज्ञान और तकनीकी विकास में ही मानव विकास है तो उनका उपयोग नियोजनात्मक विधि से हो। हमें विश्व स्तर पर और प्रत्येक समाज के स्तर पर इस ह्रास और प्रदूषण की ओर ध्यान देकर संहारक स्थिति को रोकना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Zimmerman. E.W., 1933, World Resources and Industries, New York : Harper. P. 1.
2. Johnston. R.J., Gregory, D., Pratt, G. and Watts, M., The Dictionary of Human Geography, 2001. p. 706.
3. Dudly Stamp, A Glossary of Geographical Terms, p. 417.
4. Fellmann, J., Getis. A. and Getis, J., Human Geography, Landscapes of Human activities, 1997. P. 278.
5. Encyclopedia of the Social Sciences, New York: Macmillan, 1933, Vol. XI, P. 290-91.
6. गुर्जर, रामकुमार, जाट, बी.सी. 2013: ''संसाधन एवं पर्यावरण'', पृष्ठ सं. 1 से 3 तक

SHRADHA EDUCATIONAL ACADEMY